हिंदी साहित्य और दलित चेतना नव मूल्यांकन

डॉ. पायल लिल्हारे

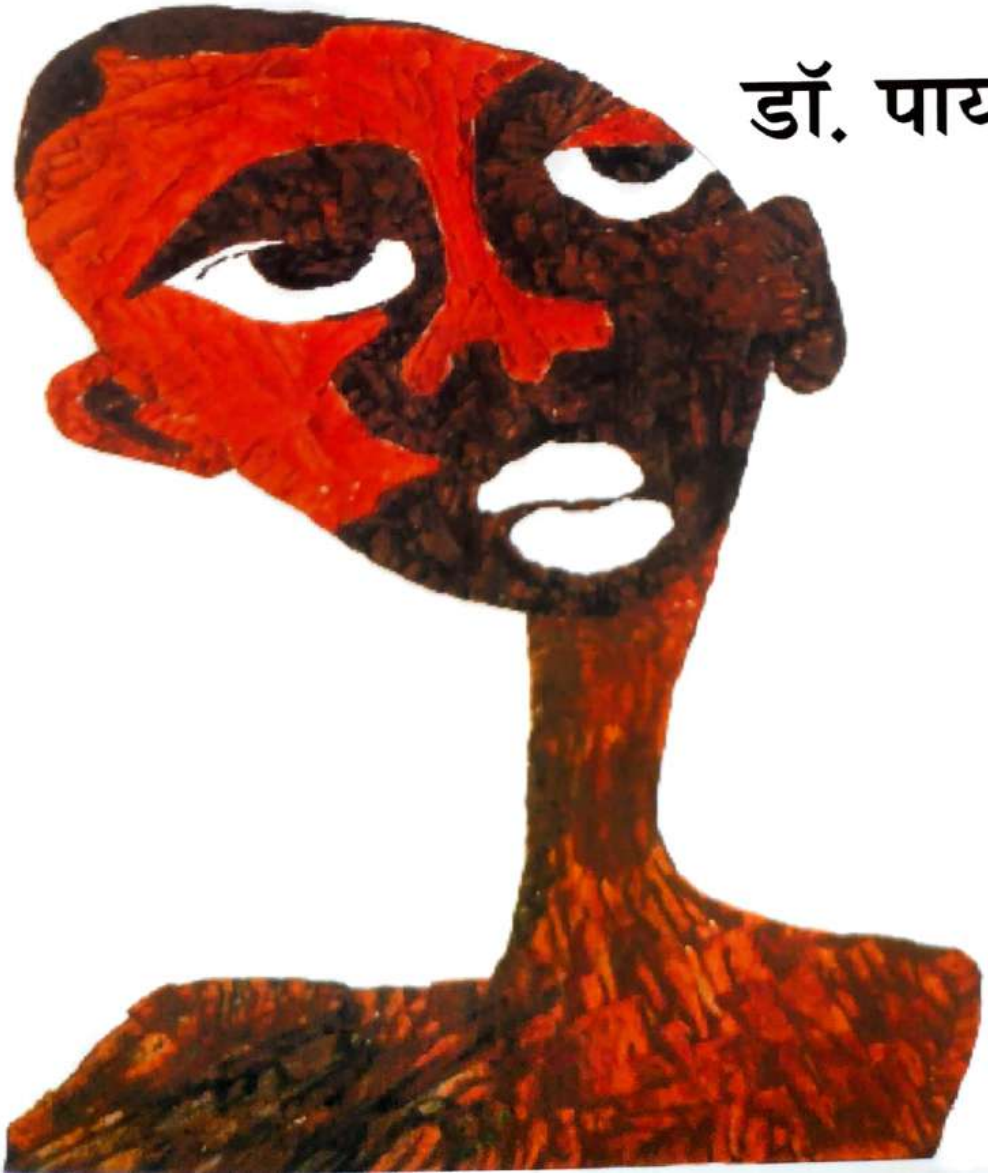

ISBN : 978-93-91119-19-5

मूल्य : सात सौ पचास रुपये

पुस्तक	:	**हिंदी साहित्य और दलित चेतना : नव मूल्यांकन**
संपादक	:	डॉ. पायल लिल्हारे
©	:	संपादक
प्रकाशक	:	**वान्या** पब्लिकेशंस
		3A/127 आवास विकास हंसपुरम्, नौबस्ता,
		कानपुर – 208 021
		Email : vanyapublicationskanpur@gmail.com
		info@vanyapublications.com
		Website : www.vanyapublications.com
		Mob. : 9450889601, 7309038401
संस्करण	:	**प्रथम, 2021**
मूल्य	:	750.00
आवरण	:	के.आर. रविन्द्र
शब्द-सज्जा	:	रुद्र ग्राफिक्स, कानपुर
मुद्रक	:	सार्थक प्रेस, कानपुर

अनुक्रम

1. हाशिए का समाज और दलित विमर्श
डॉ. श्याम मोहन पटेल 11
2. नवजागरण और दलित चेतना का प्रश्न
डॉ. तरन्नुम सबा 18
3. समकालीन अस्मितामूलक विमर्श और दलित
भगवान साहु 25
4. दलित विमर्श : अवधारणा एवं स्वरूप
श्रीमती सृचा साहू 31
5. दलित साहित्य : एक विश्लेषण
डॉ. (श्रीमती) धनेश्वरी दुबे 37
6. मुक्ति के संघर्ष में दलित साहित्य की भूमिका
श्रीमती आशा रानी पटनायक 46
7. दलित साहित्य : दलित दुर्दशा का दस्तावेज
रजनी कुमारी 52
8. दलित विमर्श : एक व्यथा संघर्ष की गाथा
पूजा सचिन धारगलकर 58
9. भारतीय समाज का बदलता स्वरूप : स्त्री दशा और दलित साहित्य
डॉ. विदुषी शर्मा 72
10. हिंदी दलित साहित्य का इतिहास और विकास
डॉ. कुमकुम श्रीवास्तव 80
11. हिंदी दलित कथा साहित्य में दलित स्त्री का पक्ष
डॉ० सुधा 87
12. स्त्रियों, दलितों और वंचितों के नये प्रस्थानों की पक्षधरता
डॉ. रामायण पाल 92
13. हिंदी साहित्य में जातीय प्रश्न
उमेश कुमार 105
14. मीडिया और दलित समाज
प्रा. डॉ. पंढरीनाथ पाटील 112

3.

समकालीन अस्मितामूलक विमर्श और दलित

भगवान साहु

उत्तर आधुनिक वैचारिकी के तहत समकालीन साहित्य चिंतन में अस्मिता का मुद्दा केन्द्र में है। इसी अस्मितावादी विमर्श के कारण सदियों से इतिहास में दबाई, कुचली गई, पीड़ित, वंचित, उपेक्षित जन समुदाय की चीखें आज पुनः अपना अस्तित्व तलाशती नजर आ रही है। 'अस्तित्व' और 'अस्मिता' को तलाशने की दिशा में उपेक्षितों की आवाज को एक अपेक्षित हाशिया छोड़कर ही सही, पर स्वीकृत किया जाने लगा है। यही कारण है कि 'दलित विमर्श', 'स्त्री विमर्श' और 'आदिवासी विमर्श' जैसे अस्मितामूलक विमर्शों ने साहित्य मनीषियों का विशेष ध्यान खींचा है। इन विमर्शों में निहित स्वरों का एक निश्चित अर्थबोध है, एक औचित्य है जो सामाजिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन की चेतना को विकसित कर रहा है। आवश्यकता इस बात की है अँधेरे में सृजनरत और अब तक हाशिए पर रहें ऐसे साहित्य का मूल्यांकन, पुनर्मूल्यांकन हो।

इतिहास गवाह है कि वक्त के साथ हाशिए पर धकेल दिए गए विभिन्न मानव समूह अपनी खोई हुई अस्मिता की पुनर्प्राप्ति और उत्थान के लिए अपनी लड़ाई उसी तरह लड़ते रहे हैं जिस तरह हर इंसान अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए रोज संघर्ष करता है। साहित्य की रचना और उसके बोध की प्रक्रिया भी अपने सामाजिक संदर्भ से कभी भी अप्रभावित नहीं रही है। दलित साहित्य का स्वरूप सामाजिक अन्याय के विरोध में है। सामाजिक मानवीय प्रतिबद्धता तथा उसके संदर्भों के साथ जुड़ी रचना प्रक्रिया, यही दलित साहित्य का सौन्दर्य विधान है। दलित साहित्यकारों ने जीवनानुभव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति के द्वारा यथार्थ की संघर्षपूर्ण स्थितियों, सामाजिक विषमताओं और अन्तर्विरोधों को चित्रित किया है। इस चित्रण में उन्होंने दलितों के लिए अमानवीय साबित होती हुई व्यवस्था के जुल्म और शोषण पर असहमति प्रकट करते हुए उसका पुरजोर ढंग से विरोध किया है। इसमें जो अनुभव और घटनाएँ प्रस्तुत हुई हैं उसने समाज के संवेदनशील लोगों के मन में एक बेचैनी पैदा की है। बहुत से मिथक और भ्रम टूटे हैं। अब तक जिन मूल्यों और

राष्ट्रबोध संस्कृति एवं साहित्य

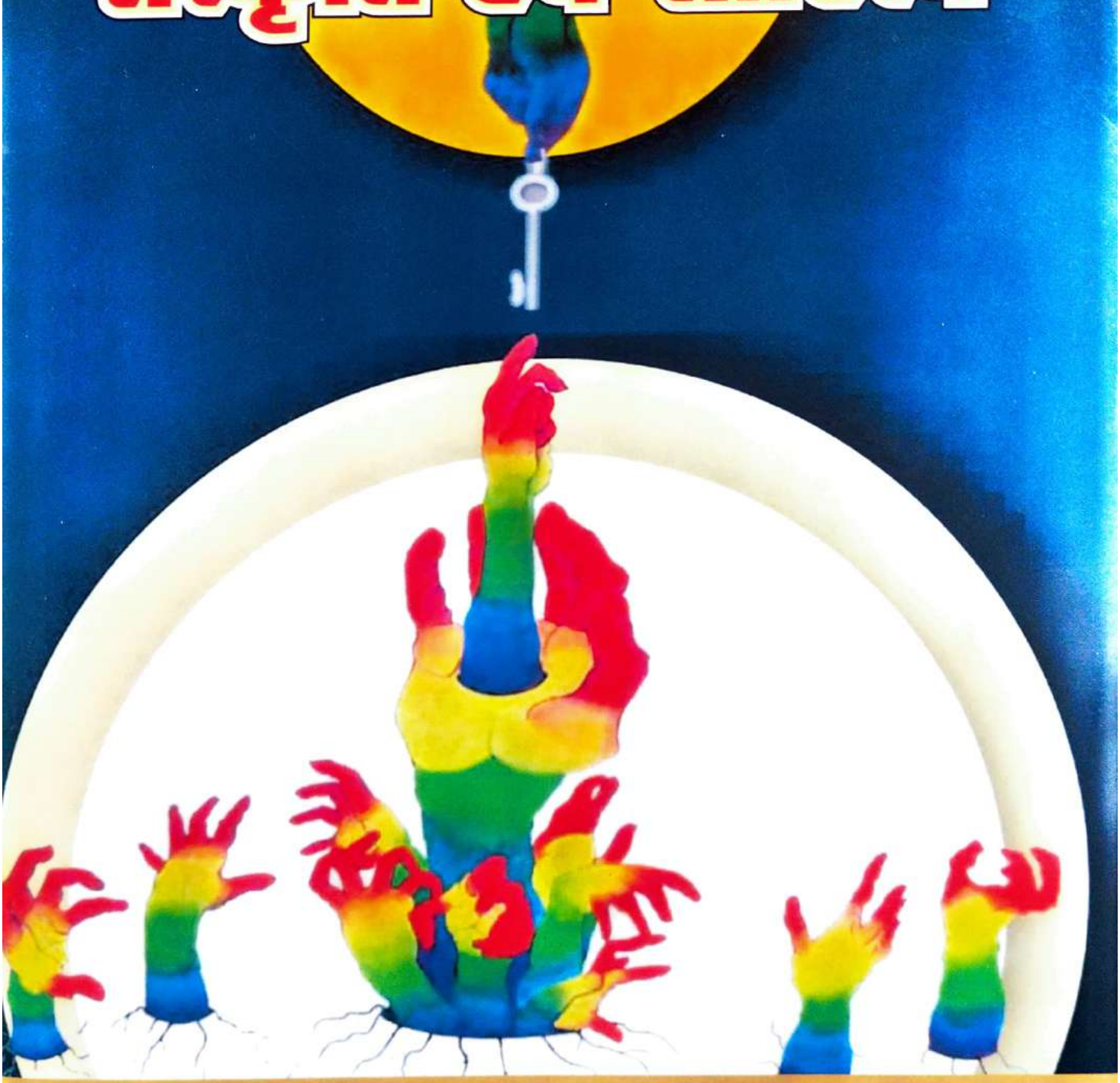

सम्पादक
डॉ. इन्दुशेखर 'तत्पुरुष' ● डॉ. राजेन्द्र कुमार सिंघवी

अनुक्रम

1. **राष्ट्र एवं संस्कृतिः साहित्य की देन** 25
डॉ. उदय प्रताप सिंह

2. **भारतीय चिंतन दृष्टि एवं साहित्य** 30
बलदेव भाई शर्मा

3. **यन्न भारते तन्न भारते** 33
डॉ. श्रीराम परिहार

4. **वर्तमान परिदृश्य में साहित्य की भूमिका** 37
डॉ. देव कोठारी

5. **सांस्कृतिक मूल्यों के पुनरुत्थान का काव्यः आधुनिक हिन्दी रामकाव्य** 46
डॉ. राजेन्द्र कुमार सिंघवी

6. **सांस्कृतिक बोध के लिए साहित्य** 57
डॉ. सुरेन्द्र डी. सोनी

7. **साहित्य, संस्कृति और जीवन मूल्य अथवा कबीर अभी जिन्दा है** 62
डॉ. लक्ष्मी लाल बैरागी

8. **साहित्य, संस्कृति और राष्ट्र** 67
डॉ. राजेश कुमार व्यास

9. **वैश्वीकरण का दौर और भारतीय संस्कृति** 77
डॉ. अनीता नायर

10. **हम क्या थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी** 84
भगवान साहु

11. **औपनिषदिक मनीषा की वर्तमान संदर्भों में प्रासंगिकता** 88
डॉ. जितेन्द्र थदानी

हम क्या थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी.....

भगवान साहु
सहआचार्य–हिन्दी,
डॉ. भीमराव अम्बेडकर राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
निम्बाहेड़ा

"हम क्या थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी।
आओं विचारें आज मिलकर, ये समस्याएँ सभी।।"

राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त की उपर्युक्त काव्य पंक्तियाँ किसी भी बड़े मुद्दे को समझने और सुलझाने के लिए एक सूत्र वाक्य का काम करती है। राष्ट्रीय–सांस्कृतिक आत्मन्वेषण की प्रक्रिया में गुप्त जी की यह चिंता, यह सवाल प्रबुद्ध समाज के सम्मुख सदैव ही महत्त्वपूर्ण रहा है। आज के परिप्रेक्ष्य में यह सवाल ज्यादा महत्त्वपूर्ण इसलिए भी है, क्योंकि धर्म निरपेक्ष राष्ट्रीय एकता की बात करते–करते आज हम एक ऐसी जगह आ पहुँचे हैं, जहाँ कट्टर साम्प्रदायिकता की स्वीकृति ही नहीं, उसका औचित्य निरूपण भी धड़ल्ले से किया जाने लगा है। हिंसा को तेजी से समाजिक स्वीकृति मिलने लगी है। राजस्थान के राजसंमंद में अफराजुल की निर्मम हत्या के बाद आरोपी शंभु के समर्थन में उग्र आन्दोलन, गो–संरक्षण के बहाने मुस्लिम कसाई और मृत जानवर के खाल निकालने वाले दलितों पर हिंसक भीड़ द्वारा बेरहमी से पिटाई, हत्या और फिर उसका राजनीतिकरण, हिन्दू लड़कियों के साथ प्रेम प्रकरण पर मुस्लिम युवाओं पर जेहादी बनाने का आरोप,–यथार्थ के इन विद्रूप दृश्यों को कभी भुलाया नहीं जा सकता है और न इनका समर्थन किया जा सकता है। उन्मादी मानसिकता के इस सोच को और उनके बहुमुखी आक्रमण को यदि रोका न गया तो इसके भयंकर परिणाम हो सकते हैं। चिंताजनक पहलू तो यह है कि में बढ़ती ऐसी असहिष्णुता पर सवाल खड़ा करने वाले तथा हर तरह अस्मिताबोध के प्रति सकारात्मक रूख रखने वाले हमारी मूल्यनिष्ठ प्रतिभाओं हमारे बुद्धिजीवियों को ही गद्दार कहकर उनकी हर तरह की प्रतिबद्धता